**International Journal of Advanced Research and Development**
**ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24**
**www.advancedjournal.com**
**Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 321-322**

# भाषा संस्कृति एवम मीडिया

**संतोष सिंह**

हिंदी प्रवक्ता, छाजू राम जाट कालेज, हिसार, हरियाणा, भारत।

## प्रस्तावना

मातृभाषा किसी व्यक्ति, समाज, संस्कृति या राष्ट्र की पहचान होती है। वास्तव में भाषा एक संस्कृति है, उसके भीतर भावनाएं, विचार और सदियों की जीवन पध्दति समाहित होती है। मातृभाषा ही परम्पराओं और संस्कृति से जोड़े रखने की एक मात्र कड़ी है। राम-राम या प्रणाम आदि सम्बोधन व्यक्ति को व्यक्ति से तथा समष्टि से जोड़ने वाली सांस्कृतिक अभिव्यक्तियां हैं। उदाहरण के लिए प्रथम सम्बोधन के समय हम हाथ मिलाकर गुड मार्निंग नहीं करते हैं, बल्कि हाथों को जोड़कर राम या अन्य भगवान का नामोच्चारण करते हैं। यह नामोच्चारण एक तरफ हमें मर्यादा अथवा सम्बन्धित भगवान की विशेषता के कारण अर्जित युग-युगान्तकारी ख्याति की याद दिलाता है।[१]

## भूमिका

ह्मारी मूल्यों और मानदंडों भाषा मे पाए जाते है और जैसे संस्कृति मे बदलाव पाए जाते है या फिर संस्कृति ही बदल जाती है उसी तरह हमीरी भाषा बदल जाती है, उदाहरण हम इस संबंध जनजाति दन्म के लोग मे देख सकते है। इन लोगो को शहरो या फिर गाँव मे बोले भाषा अपने समझ मे नही आती सिर्फ वो भाशा जो उनके जनजाति के पितरों ने उन्हे सिखाया है सिर्फ उसी भाशा से वे भात करते है। इसी वजह से उनके संस्कृति बाकी दुनिया से बिल्कुल अलग है। किसी दो जनजाति के भाषा और संस्कृति कभी मिलता- जुलता नही। एक और उदाहरण यह भी हो सकता है कि हमारा ही देश मे अनेक भाषाए पाइ जा सकती है, और जो लोग उस भाषा अपने घरो मे बात करते है उनका अपने ही संस्कृति है, जैसे कपडे वह पहनते है। खाना खाते है, त्योहार मनाते है आदी सब उनके संस्कृति पर निर्भर करती है निरपेक्ष जिस धर्म से वे आते है।[२]

## भाषा संस्कृति एवम मीडिया

हमारा देश आज संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। वैश्वीकरण ने एक ओर अमरीकी डालर का तथा दूसरी ओर अंग्रेजी भाषा का महत्व बढ़ा दिया है। चूंकि हमारी शिक्षा में मानसिक परिपक्वता को स्थान नहीं है, अत: हम एक प्रवाह में पड़ गए। आंखें मूंदकर चले ही जा रहे हैं। अच्छे-बुरे अथवा उपादेय एवं हेय का भेद करना भूल गए। शिक्षित समाज धीरे-धीरे भारतीय संस्कृति से और स्वयं अपनी आत्मा से दूर होता जा रहा है। अभी इनकी संख्या बहुत कम है, किन्तु इनका झुकाव अंग्रेजी संस्कृति एवं जीवन दर्शन की ओर दिखाई पड़ता है। ये ही लोग देश के नीति-निर्माता भी हैं।

परिणाम यह होता है कि जब भी कोई नीति संस्कृति में बदलाव की बात कहती है, तब टकराव की एक स्थिति बन जाती है। अधिकांश देशवासी मूल अवधारणाओं में बदलाव नहीं चाहते। नई संस्कृति इन मर्यादाओं को तोड़ती हुई दिखाई पड़ती है। जैसा कि आज संविधान की धारा 377 के मामले में होता दिखाई पड़ता है।

ऐसे हालात में मीडिया की भूमिका को भी इसी भाषाई परिपेक्ष में देखना चाहिए। अंग्रेजी मीडिया और टीवी नई विचारधारा के पोषक दिखाई पड़ते हैं। आम आदमी से दूर रहने के कारण भारतीय मानसिकता को गहराई से नहीं समझ पाते। भारतीय शब्दों को अंग्रेजी में अनुवाद करके ही समझते हैं। अत: विदेशी विचारधारा एवं तर्क देकर विषयों को प्रस्तुत करते रहते हैं। भाषाई समाचार-पत्र लोगों के नजदीक भी रहते हैं और सांस्कृतिक विषयों के साथ भी जुड़े होते हैं। वे मूल्यों पर किसी भी दबाव का विरोध करते हैं। हमारे नीति-निर्माता इसीलिए अंग्रेजी मीडिया तथा टीवी पर आश्रित रहते हैं। वहां टकराव भी नहीं है और उनके अहंकार की तुष्टि भी हो जाती है। चिन्तनधारा भी एक सी होती है। इस प्रकार मीडिया भी देशी एवं अंग्रेजी भेद से दो भागों में बंट गया।

अंग्रेजी का सर्वाधिक प्रभाव हमारे अधिकारी एवं न्यायिक वर्ग पर दिखाई पड़ता है। इनकी शिक्षा एवं प्रशिक्षण दोनों ही अंग्रेजी में होते हैं। इनकी जीवनशैली भी वैसी ही रहती है। इनके मुकाबले नेता आम आदमी के ज्यादा नजदीक होते हैं, किन्तु दोनों का चोली-दामन का साथ रहता है। नीतियां तो अधिकारी बनाते हैं। आम आदमी से तो इनका नाता ही नहीं रहा। विदेशी कानूनों और विश्लेषणों के आधार पर यहां भी कानून बनाते रहते हैं। देश में एक नई संस्कृति पैदा की जाने लगी है। नए कानूनों के कारण जनजीवन भी अस्त-व्यस्त और त्रस्त होने लगा है। इस ओर कानूनविदों का या नेताओं का ध्यान कभी नहीं जाता। देश में शान्ति के स्थान पर अशान्ति की प्रतिष्ठा होती है। टकराव तो सरकार से किया नहीं जाता, भ्रष्टाचार को अवश्य बढ़ावा मिलता रहता है।

आवश्यक यह है कि हम किसी व्यवस्था अथवा जीवन की अवधारणा को अच्छा-बुरा तो नहीं कहें, किन्तु हर निर्णय का दूरगामी परिणाम तो निर्णय करने से पहले समझ लें। यही तो नहीं होता। जिन लोगों को ईश्वर ने देश चलाने के लिए संसद में बिठाया, वे भी यदि प्रवाह में बहने लगे, तब दोष हम किस को देंगे।

हमें न अंग्रेजी से विरोध है, न ही किसी अन्य भाषा से। भाषा तो माध्यम ही है। जब तक माध्यम रहती है, तब तक कोई हानि भी नहीं होती। हो क्या रहा है कि हमारे शब्दों के समकक्ष अंग्रेजी शब्द ढूंढकर दोनों के पूरक की तरह काम लेने लग गए हैं। इस दोष को यदि दूर कर लिया जाए, तो टकराव स्वत: ही रूक जाएगा। उदाहरण के लिए

हमारा संविधान धर्मनिरपेक्ष है। धर्म की परिभाषा के अनुसार किन्हीं दो व्यक्तियों का धर्म एक नहीं हो सकता। हर व्यक्ति का अपना निजी धर्म होता है। धर्म को हम अंग्रेजी के रिलिजन में बदल दें तो वह साम्प्रदायिक/सामूहिक स्वरूप है। संविधान का सम्प्रदाय निरपेक्ष होना तो सही होगा। धर्मनिरपेक्ष अथवा अधर्मी होना वांछित नहीं है। धर्म की तरह शिक्षा भी एक अवधारणा है। बहुत बड़ी परिभाषा है इसकी और इसमें सम्पूर्ण जीवन का सर्वांगीण विकास सम्मिलित है। एजुकेशन में व्यक्ति की तो कहीं चर्चा ही नहीं है। केवल विषय पढ़ाए जाते हैं। और इसका लक्ष्य केवल नौकरी देना रह गया। शेष जीवन से इसका लेना-देना ही नहीं है। शिक्षा नीति भले किसी भी भाषा में बने, उसकी मूल अवधारणा बनी रहनी चाहिए। आज शिक्षित व्यक्ति ही अधिक अपराध करता दिखाई पड़ता है। यह तो शिक्षा का अपमान ही कहा जाएगा। जब अरबों रूपए खर्च करके इसी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाएगा तो एक संवेदनाविहीन मानव संस्कृति का ही निर्माण होगा। इसका विरोध करना ही यदि टकराव है, तो यह तो समय के साथ बढ़ता ही जाएगा। भले ही मीडिया का एक हिस्सा धन लेकर मौन हो जाए, देश की आत्मा तो मुक्ति के लिए छटपटाएगी।[३]

## निष्कर्ष

कोई घटना किसी चीज का 'होना' मात्र नहीं है, वह घटना एक रिश्ता भी है- उस 'होने' और एक प्रतीक-प्रणाली के बीच का रिश्ता। यह ठीक है कि घटना की कवरेज इस बात से भी निर्धारित होती है कि अखबार और उसके लक्ष्य-समूह के बीच प्रतीक-व्यवस्था किस फ्रेम में सक्रिय होती है, लेकिन इन दोनों चीजों के कारण ही पत्रकारिता का ही नहीं, बल्कि साहित्य का भी शुरुआती मसौदा बन जाती है। घटना और उसके अर्थान्वयन के बीच में यदि कल्पना साहित्य में सक्रिय होती है।[४]

## संदर्भ

१. http://www.spandanfeatures.com
२. https://hi.wikipedia.org
३. https://gulabkothari.wordpress.com
४. http://hindi.webdunia.com